राजपूतों की उत्पत्ति B.A + I

6 वीं शताब्दी ईस्वी से राजपूत शब्द का उपयोग शुरू हुआ। सातवीं से बारहवीं शताब्दी ईस्वी तक का काल उत्तरभारत के इतिहास में सामान्यतः "राजपूत काल" के नाम से जाना जाता है। सातवीं - आठवीं शताब्दी से हमें राजपूतों का उदय दिखाई देने लगता है; और बारहवीं शती आते आते उत्तरभारत में उनके 36 कुल अत्यंत प्रसिद्ध हो जाते हैं।

<u>राजपूतों की उत्पत्ति</u> - राजपूत" शब्द संस्कृत के "राजपुत्र" का विकृत रूप है। राजपूतों की उत्पत्ति बहस का विषय है। मुख्यतः इस संबंध में दो मत प्रचलित हैं।

1) <u>विदेशी उत्पत्ति का मत</u> → इस मत का प्रतिपादन सर्वप्रथम कर्नल जेम्स टाड ने अपनी पुस्तक राजस्थान के "<u>एनल्स एंड एंटीक्विटीज</u>" में किया। उनके अनुसार राजपूतों के मूल "<u>सिथियन मूल</u>" के थे। उन्होंने कहा कि अश्वमेध यज्ञ; घोड़े की पूजा, और हथियारों और समाज में महिलाओं की स्थिति इन विदेशी और राजपूतों के बीच समान थी; इसी आधार पर राजपूत विदेशियों के वंशज थे।

"<u>विलियम क्रूक</u>" ने टॉड के दृष्टिकोण का समर्थन किया। उन्होंने कहा कि राजपूतों के कई पारिवारिक नामों का पता केवल इन विदेशियों के आक्रमण की अवधि और विशेष रूप से हूणों से लगाया जा सकता है। "<u>वी॰ ए स्मिथ</u>" के अनुसार उत्तरपश्चिम की राजपूत जातियों प्रतिहार; चौहान, परमार; चालुक्य आदि की उत्पत्ति शकों तथा हूणों से हुई थी इसी प्रकार गहड़वाल; चन्देल; राष्ट्रकूट आदि मध्य तथा दक्षिणी क्षेत्र की जातियाँ गोंड, भर जैसी आदिम जातियों की संतान थी। स्मिथ की धारणा है कि शक कुषाण आदि विदेशी जातियों ने हिन्दू धर्म ग्रहण कर लिया। ये कालांतर में भारतीय समाज में पूर्णतया घुल मिल गयी; "<u>मनुस्मृति</u>" में शकों को "<u>व्रात्य क्षत्रिय</u>" कहा गया है।

डॉ. भंडारकर के अनुसार अग्निकुल के चार राजपूत वंश - प्रतिहार, परमार, चौहान तथा चौलुक्य गुर्जर नामक विदेशी जाति से उत्पन्न हुए थे। उन्होंने बताया कि गुर्जर-प्रतिहार वंश के लोग "खजर" नामक जाति की संतान थे, जो हूणों के साथ भारत आयी थी।

ऐसा प्रतीत होता है कि इन विदेशी जातियों को शुद्धि द्वारा भारतीय समाज में सम्मिलित करने के उद्देश्य से ही चंदबरदाई द्वारा रचित "पृथ्वीराजरासो" में अग्निकुंड द्वारा राजपूतों की उत्पत्ति बताई गई है। इसके अनुसार "जब परशुराम ने क्षत्रियों का विनाश कर दिया; तब प्राचीन ऋषियों ने (वशिष्ठ) ने वैदिक धर्म की रक्षा के लिए आबू पर्वत पर यज्ञ किया, जहाँ यज्ञ की अग्निकुंड में चार राजपूत कुलों का उद्भव हुआ - परमार, प्रतिहार, चौहान तथा चालुक्य। इस कथा से स्पष्ट संकेत मिलता है कि भारतीय वर्णव्यवस्थाकारों ने विदेशी जातियों को शुद्धि द्वारा भारतीय वर्णव्यवस्था के अंतर्गत स्थान प्रदान कर दिया था।

(2) भारतीय उत्पत्ति का मत → राजपूतों की उपर्युक्त विदेशी सिद्धांत का विरोध "गौरीशंकर", "हीराचंद ओझा" तथा "सी.वी. वैद्य" जैसे कुछ भारतीय विद्वानों ने किया है। इन विद्वानों के प्रमुख तर्क इस प्रकार है -

1) टाड ने राजपूत तथा सीथियन जातियों में जिन समान प्रथाओं का संकेत किया है, वह कल्पना पर आधारित है। ये सभी प्रथाएं भारत की प्राचीन क्षत्रिय जाति में देखी जाती है।

2) कुक के निष्कर्ष की पुष्टि किसी भी ऐतिहासिक साक्ष्य से नहीं होती है।

3) इस बात का कोई प्रमाण नहीं है कि "खजर" नामक किसी जाति ने कभी भी भारत पर आक्रमण किया था। भारतीय तथा विदेशी किसी भी साक्ष्य में इस जाति का उल्लेख नहीं है।

4) "पृथ्वीराजरासो" में वर्णित अग्निकुल की कथा ऐतिहासिक नहीं लगती। उल्लेख रासो की प्राचीन पांडुलिपियों में नहीं मिलता है।

Scanned with CamScanner

इस प्रकार विदेशी उत्पत्ति का मत कल्पना पर अधिक आधारित है, ठोस तथ्यों पर कम। राजपूत शब्द वस्तुतः "राजपुत्र" का ही अपभ्रंश है जिसका प्रयोग भारतीय ग्रंथों में क्षत्रिय जाति के लिए हुआ है। "पाणिनी" की "अष्टाध्यायी" में राजपुत्र का प्रयोग "राजन्य" अथवा "राजक" के रूप में हुआ है। "महाभारत" में विभिन्न प्रकार के अस्त्र-शस्त्र चलाने वाले को "राजपुत्र" कहा गया है। 8 वीं शती के लेखक "भवभूति" ने कौशल्या को "राजपुत्री" कहा है। "बाणभट्ट" के "हर्षचरित" में राजपुत्र शब्द का प्रयोग "क्षत्रिय राजाओं के पुत्रों" के लिए किया गया। "कल्हण" कृत 'राजतरंगिणी' में शाही परिवार के उत्तराधिकारी को "राजपुत्र" की संज्ञा [illegible] ऐसा प्रतीत होता है कि तुर्कों द्वारा पराजित हो जाने के बाद राजपूतों की राजनैतिक प्रतिष्ठा समाप्त हो गई, तथा तुर्कों ने अपमानस्वरूप उन्हें "राजपूत" कहना प्रारंभ कर दिया। कालांतर में यही नाम प्रचलित हो गई। अतः इन विद्वानों के अनुसार राजपूतों को "वैदिक क्षत्रियों" की संतान मानना चाहिए [illegible]

आधुनिक सामाजिक-आर्थिक इतिहासकारों ने राजपूत [illegible] की उत्पत्ति के लिए कुछ सामाजिक प्रक्रियाओं को उत्तरदायी माना है। एक उल्लेखनीय तथ्य यह है कि राजस्थान तथा गुजरात में प्रारंभिक राजपूत वंशों का उदय उस समय हुआ; जबकि गुप्तसाम्राज्य के पतनोपरांत विदेशी आक्रमणों के कारण अर्थव्यवस्था पतनोन्मुख हो रही थी। ठीक इसी समय [illegible] में सामंतवादी प्रवृत्तियाँ भी प्रबल हुई। प्राचीन राजपूताना क्षेत्र; जो राजपूत का प्रमुख केंद्र था, में सामंती संगठन सुदृढ़ था; इसी कारण छोटे जमींदारों [illegible] संज्ञा "राजपुत्र" (राजपूत) हो गई। 12 वीं शदी की रचना "अपराजितपृच्छा" [illegible] में राजपुत्र वर्ग में अधिकांशतः छोटे भूमिधर सरदार थे। उत्तरगुप्त काल [illegible] तक ये विशिष्ट आते-आते वह विशिष्ट वर्ग" बन गया होगा।

इसी कारण विद्वानों का एक वर्ग [illegible] जिसमें 'दशरथ शर्मा'; "बी० एस० पाठक"; "बी० एन० पाठक" है, कि [illegible] मान्यता है कि राजपूत जाति में कई क्षत्रियेतर वर्ण भी शामिल थे। इस संदर्भ में "मत्स्य पुराण" में उल्लिखित "ब्रह्मक्षत्र परंपरा" की ध्यान दिलाया है। राजपूतकालीन कुछ लेखों तथा साहित्यों में कुछ [illegible] वंशों के "ब्राह्मण मूल" की ओर संकेत किया गया है। कुछ लेखों [illegible] यह भी पता चलता है कि ब्राह्मण एवं क्षत्रिय वर्णों के बीच वैवाहिक [illegible] होने के फलस्वरूप जो संतति उत्पन्न हुई उन्हें "ब्रह्मक्षत्रिय" कहा [illegible]

इस प्रकार ऐसा प्रतीत होता है कि राजपूत वंश की उत्पत्ति भारतीय समाज की विविध जातियों तथा जनजातियों के साथ-साथ, कुछ विदेशी आक्रामक जातियों से भी हुई जो भारत में बस गई थी, और हिन्दू समाज ने उन्हें आत्मसात् कर लिया था। यही कारण है कि पूर्व-मध्यकाल के कई ग्रंथों में "राजपूतों" को मिश्रित जाति का बताया गया है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि इस वंश में उच्चवर्णों के साथ-साथ निम्नवर्णों के रक्त का भी मिश्रण था। इस काल के कई राजवंश क्षत्रियेतर जातियों से भी संबंधित थे।

Scanned with CamScanner